शोधामृत

(कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की अर्धवार्षिक, सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित शोध पत्रिका)

Online ISSN-3048-9296
Vol.-1; issue-2 (July-Dec.) 2024
Page No- 127-131

©2024 Shodhaamrit (Online)
www.shodhaamrit.gyanvividha.com

डॉ. राम कुमार
प्राचार्य,
मरुधर महिला विद्यापीठ,
पल्लू, हनुमानगढ़.

Corresponding Author :
डॉ. राम कुमार
प्राचार्य,
मरुधर महिला विद्यापीठ,
पल्लू, हनुमानगढ़.

सर्वोदय अवधारणात्मक विश्लेषण

सार : स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सर्वोदय दर्शन ने भारतीय समाज को गहराई से प्रभावित किया। यह दर्शन एक ऐसे आदर्श समाज की परिकल्पना करता है जो सत्य एवं अहिंसा पर आधारित हो तथा जिसमें वर्ग, जाति या शोषण का कोई स्थान न हो। महात्मा गाँधी ने स्वतंत्र भारत के लिए इस सर्वोदय अवधारणा को मूर्त रूप दिया जिसका लक्ष्य सभी के सर्वांगीण विकास को सुनिश्चित करना है। सर्वोदय दर्शन आध्यात्मिक एवं नैतिक सिद्धांतों पर आधारित एक क्रान्तिकारी विचारधारा है, जो मानव मात्र के कल्याण हेतु सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक जीवन में आमूल परिवर्तन पर बल देती है। इसमें भूदान एवं ग्रामदान जैसे अहिंसक आंदोलनों के माध्यम से शोषणमुक्त एवं विकेन्द्रीकृत ग्राम-स्वराज्य की स्थापना का मार्ग प्रस्तुत किया गया है। सर्वोदय के सिद्धांत वर्तमान भौतिकवादी समाज से भिन्न हैं और वह व्यक्ति व समाज के हितों में पूर्ण समन्वय पर जोर देता है। इस शोध पत्र में सर्वोदय की अवधारणा, उसके विश्लेषणात्मक मूल्यांकन, व्यवहारिक क्रियान्वयन तथा वर्तमान संदर्भ में इसकी प्रासंगिकता पर विस्तृत चर्चा की गई है।

मुख्य शब्द : सर्वोदय; सत्य; अहिंसा; ग्राम स्वराज्य; भूदान; ग्रामदान; अपरिग्रह।

परिचय : स्वाधीनता के पश्चात सर्वोदय दर्शन ने भारतीय जनमानस को काफी प्रभावित किया है। स्वाधीनता संग्राम के युग में देशवासियों की आकांक्षा थी कि स्वतंत्र भारत में एक ऐसी व्यवस्था की स्थापना की जाए जो स्वतंत्रता, समानता तथा न्याय पर आधारित हो। महात्मा गाँधी इन आकांक्षाओं के मूर्त रूप थे, जिसे उन्होंने सर्वोदय रूप में व्यक्त किया। वे चाहते थे कि सत्य तथा अहिंसा पर आधारित वर्गविहीन, जाति-विहीन तथा शोषण-मुक्त समाज की स्थापना की जाए जिससे प्रत्येक व्यक्ति तथा समूह को अपने सर्वांगीण विकास के अवसर व साधन प्राप्त हों। **यही सर्वोदय का लक्ष्य था।**

सर्वोदय के यथार्थ पर टिप्पणी करते हुए इन्दु टिकेकर ने कहा है कि, "सर्वोदय का आदर्श हमारे लिए नया नहीं है, इसे सर्वभूत हित की भारतीय भावना, सुकरात की सत्य-साधना तथा बाइबिल से प्रभावित रस्किन की आंदोलन योजना एक साथ समाई हुई है। परन्तु इस अर्थ में सर्वोदय आज तक प्रेरक शक्ति नहीं बन पाया है।"[1] इस प्रकार सर्वोदय शब्द और विचार दोनों का ही अभ्युदय बना हुआ है। आगे चलकर भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के संदर्भ में जैसे 'स्वराज्य' शब्द के आंतरिक तत्वों का विस्तार हुआ, वैसे-वैसे ही रचनात्मक कार्यों के संदर्भ में सर्वोदय सूत्रों का विकास होता चला गया।

सर्वोदय संयोजन "दूसरों को जिलाने के लिए जिओ" के आदर्श को अंगीकृत करता है। इन सभी उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए राजनीतिक प्रजातंत्र को अपनाना आवश्यक है। सच्चा प्रजातंत्र नागरिकों का मित्र होता है। समाज में व्यावहारिक सुधार के साथ-साथ शिक्षकों, असैनिक सेवकों, राजनीतिज्ञों, व्यापार संघों के अधिकारियों एवं समाज के अन्य विशिष्ट जनों में अपने मत का क्रमिक रूप से प्रचार भी होना चाहिए।

समाज का मुख्य ध्येय समाजवाद का प्रसार होना चाहिए। इसके विभिन्न साधन हो सकते हैं, जो व्यक्ति की आवश्यकता अनुसार निर्धारित होंगे। इनमें प्रमुख हैं – जनता को बैठकों, प्रवचन, वाद-विवाद, ग्रीष्मकालीन विद्यालयों, राजनीतिक, आर्थिक एवं सामाजिक समस्याओं के समाधान हेतु अनुसंधान कार्य तथा पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं एवं इश्तहार-पुस्तिकाओं के वितरण द्वारा प्रशिक्षित करना। उन्हें समाजवादी ढंग से शिक्षित करना ही समाज का मुख्य क्रियाकलाप होना चाहिए, ताकि समाज समुन्नत एवं समृद्धशाली बन सके।[9]

सर्वोदय की अवधारणा : सर्वोदय का ईश्वर सबका ही होगा। अतः ईश्वर को सत्य एवं सत्य को ईश्वर माना गया है। अब इस व्यापक कल्पना में नास्तिकों की नास्तिकता भी ईश्वरवाद ही कहलाएगी।[10] सनातन अस्तित्व विश्व में एकमात्र ईश्वर का ही माना गया है। अतः हम उसे सरल अर्थों में समझने के लिए सत्य कह सकते हैं। सत्य ही वस्तुतः ईश्वर का सही नाम है। इस सत्य की खोज में व्यक्ति को स्वयं को सत्य में विलीन कर देना पड़ता है। जहाँ स्वार्थ का अस्तित्व नहीं रहता, वहाँ ईश्वर के सच्चे दर्शन होते हैं।

सर्वोदय चिंतन उस स्तर को व्यक्त करता है जहाँ मानव-मात्र के हितों के मध्य एक अनिवार्य एकरूपता और विलक्षण अद्वैत स्थापित हो जाता है। सर्वोदय कल्याण के नैतिक और आध्यात्मिक संदर्भों के प्रति पूर्णतया समर्पित है, और इस कारण वह सत्य से एकाकार हो जाने को उदय का उत्कर्ष मानता है। सत्य से साक्षात्कार की आध्यात्मिक अनुभूति किसी दो व्यक्तियों के मध्य किसी टकराव की संभावना को स्थान नहीं देती, क्योंकि प्राणी-मात्र की एकता इस अनुभूति का अनिवार्य पक्ष है।

सर्वोदयी तत्त्वज्ञान सांसारिक सत्य से पलायन की प्रेरणा नहीं देता, अपितु वह लौकिक जीवन को इस प्रकार संचालित व विनियमित करने पर बल देता है जिससे मानव-मात्र के हित सुरक्षित रहें और वे वर्तमान पारिश्रमिक प्रणाली एवं अत्याचारी राज्य-व्यवस्था से अपनी मुक्ति अवश्य प्राप्त करें।

"परमेश्वर का साक्षात्कार तभी होगा जब हम संपत्ति-विसर्जन को अपनी व्यवस्था का अपरिहार्य तत्त्व मानें।" गांधीजी संपत्ति के स्वामित्व के मोह को तिलांजलि देना आवश्यक मानते हैं। यदि ऐसा करने में हिचक होगी तो समाज में अनाचार व हिंसा का ही राज्य होगा।"[5] सर्वोदयी विचारधारा में भूमि को शोषण का मुख्य कारण माना जाता है। जब तक भू-स्वामित्व की भावना को समाप्त नहीं किया जाएगा, तब तक समाज में समानता स्थापित करना कठिन है। इसी के साथ साहूकारों और सूदखोरों को भी समाप्त किया जाना चाहिए। इन उद्देश्यों की पूर्ति एवं ट्रस्टीशिप (संपत्ति के संरक्षकत्व) के सिद्धांत को स्वीकार करने के लिए 'कुटुंबकम्' आधारित आर्थिक व्यवस्था समाज में लागू करनी होगी। सर्वोदय

समाज में उत्पादन भी समाज की आवश्यकता के अनुरुप होगा तथा लाभ-प्रेरित व्यवस्थाएँ हावी नहीं होंगी। सर्वोदय दर्शन प्रत्येक ग्रामवासी को स्वावलंबी बनाने का लक्ष्य रखता है, परंतु स्वावलंबन का अर्थ यह नहीं होगा कि जीवन की जो आवश्यकताएँ गाँव में पूरी न हों, उनकी पूर्ति बाहर से नहीं होगी। स्वावलंबन का अर्थ है कि अन्न-वस्त्र जैसी आवश्यकताएँ गाँव में ही पूरी होंगी।[3]

ग्राम स्वावलंबन के आदर्श की पूर्ति हेतु सर्वोदयी चिंतकों का विचार है कि हमें पूरे प्रयास से ग्राम-उद्योगों का विकास करना होगा। ऐसा करने से ग्राम स्वावलंबन की भावना पूर्ण होगी। मालिक और मजदूर के भेद को मिटाकर ही अनिवार्य एकता की आध्यात्मिक आस्था सामाजिक दर्शन का मूल मंत्र बन सके। सर्वोदयी सामाजिक दर्शन मानव-मात्र की समानता पर अनिवार्यतः विश्वास करता है। व्यक्ति अपने भौतिक अस्तित्व का सर्वाधिक सार्थक उपयोग तभी कर सकता है जब वह अपनी सारी शक्तियों, कर्तव्यों और गतिविधियों को मानव-मात्र की सेवा के प्रति समर्पित कर दे।

व्यक्ति के आचरणों पर बाह्य नियंत्रण का पूर्ण अभाव और अपने अस्तित्व को दूसरों के अस्तित्व, सुख व सुरक्षा के लिए समर्पित कर देने की उत्कट लालसा एवं तत्परता – सर्वोदयी नैतिकता के दो आधार स्तंभ हैं। इस प्रकार दूसरों के सुख में सुख की खोज करना सर्वोदय दर्शन में आनंद की अनुभूति का मूल मंत्र है। ऐसी स्थिति में व्यक्तियों के हितों के बीच किसी लौकिक टकराव की संभावना भी समाप्त हो जाती है। सर्वोदयी तत्त्वज्ञान का विचारधारा के स्तर पर रूपांतरण समाज को व्यक्ति-प्रधानता (व्यष्टिवाद) और समाज-प्रधानता (समष्टिवाद) के सभी रूपों से हटाकर एक अद्वितीय स्तर प्रदान कर देता है।

सर्वोदय अवधारणा का विश्लेषणात्मक मूल्यांकन : सर्वोदय एक दर्शन है, एक क्रांतिकारी पर अर्द्ध-क्रांतिकारी प्रणाली है। 19वीं सदी में फ्रांस में इसका उद्भव हुआ था। इस दर्शन का विशुद्ध वर्णन जॉर्ज सोरेल एवं अन्य विद्वानों ने अपने लेखों में किया है। उनका विश्वास था कि वर्ग-संघर्ष आधुनिक समाज की एक प्रमुख चारित्रिक विशेषता है एवं समाज-परिवर्तन की एक विधि है। श्रमिक वर्ग का अपने मालिक या अधिकारियों के साथ संघर्ष जीवन का एकमात्र उचित ध्येय है। यह अनिर्वचनीय, अवर्णनीय, अद्भुत, सर्वव्यापी सत्ता है जिसका स्वरूप मन व वाणी से परे है।

मार्क्स का समाजवाद राज्य में सत्ता का केंद्रीकरण चाहता है, किंतु ऐसा राज्य सहज ही दमनतंत्र में परिवर्तित हो सकता है। सिंडिकेटवाद समाजवाद का वह रूप है जो वर्ग-संघर्ष के फलस्वरूप ही क्रांति को संभव मानता है – अर्थात जो क्रांति ट्रेड यूनियनों द्वारा लाई जाएगी और जिसका उद्देश्य राज्य एवं उसके तंत्र को बदल देना मात्र है।

उपरोक्त अन्य विचारधाराओं से भिन्न, सर्वोदय वस्तुतः गांधीवादी तत्त्वज्ञान का रूपांतरण है। शब्दार्थ के आधार पर सर्वोदय एक ऐसी स्थिति को इंगित करता है जिसमें सबके कल्याण को एक साथ सुनिश्चित किया जाता है। सर्वोदयी आग्रह राजनीतिक दर्शन का एक विलक्षण प्रयोग है। वस्तुतः राजनीतिक चिंतन की कोई भी धारा मानवीय हितों की एकरूपता के उस स्तर की कल्पना नहीं करती जहाँ सबके हितों के मध्य सभी प्रकार के टकराव विलीन हो जाएँ। राजनीतिक चिंतन की विभिन्न धाराएँ समुदाय के सदस्यों के हितों के टकराव के संदर्भ में या तो किसी वर्ग विशेष के हितों को सुनिश्चित किए जाने की आवश्यकता प्रतिपादित करती हैं, या समुदाय के विद्यमान परस्पर-विरोधी हितों में सामंजस्य को अपरिहार्य मानती हैं।[16]

चर्चा तथा विश्लेषण : सर्वोदयी अवधारणा सच्चे लोकतंत्र की स्थापना पर बल देती है, जहाँ प्रत्येक नागरिक स्वयं को शासक समझे। ऐसी बराबरी की भावना से ही शासन-मुक्त और शोषण-मुक्त समाज का निर्माण संभव है, जिसमें कुछ अधिकारियों के स्थान पर संपूर्ण जनता शासन-प्रक्रिया में सहभागी होगी।[2]

सर्वोदय के आध्यात्मिक तथा नैतिक आदर्श वर्तमान भौतिकवादी समाज की मान्यताओं से सर्वथा भिन्न हैं।[15] यही कारण है कि आज हमारे जीवन में प्रेम, सहयोग, सद्भाव, सत्य तथा अहिंसा के सभी मापदंड लुप्त होते जा रहे हैं। नैतिक आदर्शों के अभाव में न तो समाज में सुचारु व्यवस्था रह पाती है और न ही लोकतांत्रिक जीवन सफल हो सकता है। आज भारत का नागरिक निराश, हतोत्साहित और आतंकित है। ऐसी निराशाभरी स्थिति में सर्वोदय ही एकमात्र उपचार के रूप में आशा की किरण प्रस्तुत करता है।

सर्वोदयी परिवर्तन की शुरुआत व्यक्ति के आत्म-शोधन से होती है, क्योंकि सर्वोदय नैतिक जागरण पर आधारित है। सत्य, अहिंसा, आत्मत्याग और सर्वधर्म समभाव जैसे सद्गुण सर्वोदय के आंतरिक आधार हैं। सर्वोदय समाज का लक्ष्य भौतिक सुखों को बढ़ाना नहीं, बल्कि जीवन में सादगी लाना और 'वसुधैव कुटुंबकम्' की भावना को साकार करना है।

सर्वोदय अर्थशास्त्र में नैतिक मूल्यों को प्रमुख स्थान दिया जाता है तथा मानव-हित की उपेक्षा नहीं होती। सर्वोदय का लक्ष्य तभी पूर्ण होगा जब मालिक और मजदूर के बीच का भेद मिट जाएगा, और समाज में परिवर्तन हेतु विकेंद्रीकृत व्यवस्था अपनाई जाएगी।

दादा धर्माधिकारी के शब्दों में, "लोगों को राज्य संस्था तथा शासन की आवश्यकता न रहे। शासन किसलिए है? लोगों को शासनातीत बनाने के लिए।"[4] सर्वोदय उस व्यवस्था को श्रेष्ठ मानता है जिसमें बाह्य शक्ति का पूर्ण विलीनीकरण हो जाए। ऐसी आदर्श व्यवस्था अनुशासन और आत्म-संयम की परम अवस्था से ही प्राप्त हो सकती है। सर्वोदय स्वामित्व-विसर्जन की प्रक्रिया को संपन्न करने के लिए निरंतर प्रयासरत रहता है। सर्वोदय की राजनीति में लोकनीति को मान्यता प्राप्त है। लोकनीति में अनुशासन, स्वतंत्रता का द्योतक बन जाता है और सर्वोदय ग्राम-स्वराज्य के सिद्धांत को अंगीकार करता है।

सर्वोदयी ग्राम-स्वराज्य में ग्राम को बुनियादी इकाई माना गया है। प्रत्येक गाँव में एक ग्राम-सभा होगी जो गाँव की व्यवस्था एवं विकास का कार्य संभालेगी। ग्राम-सभाओं के प्रतिनिधियों से जिला-सभा, जिला-सभाओं से राज्य-सभा तथा राज्य-सभाओं से राष्ट्र-सभा गठित होगी। शीर्ष पर स्थित राष्ट्र-सभा को केवल समन्वय एवं निर्देशन का दायित्व दिया गया है।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली में वह शक्ति नहीं है जो व्यक्ति के चरित्र का निर्माण कर सके। "विभेदमूलक समाज की रचना का दायित्व पूर्णतः वर्तमान शिक्षा प्रणाली पर ही आधारित है।"[13] अतः शिक्षा में आमूल परिवर्तन के बिना समाज और राष्ट्र का समुचित विकास संभव नहीं है।

सर्वोदय समाज में अस्पृश्यता और सांप्रदायिकता को त्याज्य माना जाता है तथा सर्वधर्म समभाव पर बल दिया जाता है। स्त्री-पुरुष के भेदभाव का अंत और सामाजिक समरसता सर्वोदय के प्रमुख लक्ष्य हैं। सर्वोदय समाज की स्थिरता के लिए अहिंसा का व्यापक प्रसार आवश्यक है; इसी उद्देश्य से विनोबा भावे ने शांति-सेना की स्थापना की। गाँधीजी का भी मत था कि सर्वोदय की सफलता अहिंसा की सफलता पर निर्भर है।[12]

विनोबा भावे ने 'ग्रामदान' को शांतिमय क्रांति का रामबाण माना, जिससे ग्राम और देश का आर्थिक व सामाजिक उत्थान संभव है तथा दैनिक जीवन की मूल समस्याओं का समाधान निहित है।[6] "जब तक सामाजिक परिवर्तन नहीं होगा, तब तक सच्चे अर्थों में समाज में सर्वोदय की स्थापना नहीं हो सकती। सामाजिक परिवर्तन के लिए चार बातें आवश्यक हैं: (1) जनतांत्रिक – अर्थात बहुमत द्वारा स्वीकृत हो; (2) क्रमिक – ताकि समाज अव्यवस्थित न हो; (3) नैतिक – जिसे जनता नैतिक दृष्टि से उचित माने; (4) शांतिपूर्ण व वैधानिक – अर्थात अहिंसक तथा विधिसम्मत हो।"[7] फेबियन समाजवादी विचारक भी आर्थिक साधनों पर सामूहिक स्वामित्व की वकालत करते हैं, ताकि सभी लोगों का समान विकास हो सके।[8] विनोबा

भावे कहते हैं, "सभी भूमि गोपाल की है", अर्थात सभी संपत्ति ईश्वर की है।[14] विभिन्न प्रकार के त्याग और दान (भूदान, संपत्तिदान, जीवनदान आदि) के सिद्धांत अपरिग्रह की अवधारणा से प्रेरित हैं। केवल संत-महात्मा ही नहीं, आधुनिक सामाजिक वैज्ञानिकों ने भी सिद्ध किया है कि मानव की अत्यधिक संग्रह प्रवृत्ति अनेक सामाजिक समस्याओं का मूल है। गाँधीजी के अनुसार आरामदायक जीवन नैतिक और सामाजिक दृष्टि से अनुचित है।[5]

निष्कर्ष : सर्वोदय का अर्थ है शोषणविहीन, वर्गहीन, शासन-मुक्त, अहिंसात्मक तथा ग्रामोद्योग-प्रधान ग्राम-स्वराज्य की स्थापना। महात्मा गांधी ने इस आदर्श की परिकल्पना की और आचार्य विनोबा भावे ने इसे व्यावहारिक रूप दिया।

सर्वोदय विचारधारा ने भूदान एवं ग्रामदान जैसे अहिंसक अभियानों के माध्यम से सामाजिक क्रांति और ग्राम-स्वराज्य की स्थापना की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं, जो हृदय-परिवर्तन पर आधारित हैं।

सर्वोदयी दर्शन प्रत्येक व्यक्ति और समाज के हितों में पूर्ण समन्वय स्थापित करने पर बल देता है। सबके कल्याण में ही व्यक्ति का कल्याण निहित है – अर्थात व्यक्तिगत एवं सामुदायिक हितों में कोई अंतर नहीं है। व्यक्तिगत स्वार्थ और सामाजिक हित के संलयन पर ही सर्वोदय के आदर्श की पूर्ण सिद्धि संभव है।[11]

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. टिकेकर, इन्दु: सर्वोदय दर्शन तथा समाज परिवर्तन: कल और आज, सर्वसेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी, 1997, पृष्ठ-27.
2. टिकेकर, इन्दु: क्रान्ति का समग्र दर्शन, सर्वसेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी, 1992, पृष्ठ-93.
3. भावे, विनोबा: विचार व स्वराज्य शासन, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, 1961, पृष्ठ-55.
4. अग्रवाल, मन्नारायण: गांधीवादी योजना के सिद्धांत, बिहार हिंदी ग्रन्थ अकादमी, पटना, 1976, पृष्ठ-93.
5. गांधी, एम. के.: सर्वोदय, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, 1955, पृष्ठ-29-30.
6. भावे, विनोबा: 'भूदान', लेख से उद्धृत, सर्वोदय पत्रिका, 21 अक्टूबर 1996, पृष्ठ-39.
7. पारीक, ए. के.: 'शोषक रिवोलूशन: भूदान', जनवरी 1958, पृष्ठ-56.
8. शॉ, जॉर्ज बर्नाड: फैबियन ऐसेज़, लॉन्गमन्स ग्रीन एण्ड कंपनी लिमिटेड, लंदन, 1963, पृष्ठ-393.
9. इनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल साइंसेज़, द मैकमिलन कंपनी एण्ड द फ्री प्रेस, न्यूयॉर्क, 1968, पृष्ठ-448.
10. दत्त, धीरेन्द्र मोहन: महात्मा गांधी का दर्शन, बिहार हिंदी ग्रन्थ अकादमी, पटना, 1981, पृष्ठ-16.
11. सिंह, रामजी: गांधी दर्शन मीमांसा, बिहार हिंदी ग्रन्थ अकादमी, पटना, 1989, पृष्ठ-36.
12. गांधी, एम. के.: संपूर्ण गांधी वाङ्मय, खंड 67, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 1974, पृष्ठ-214.
13. द्विवेदी, कमला: गांधीजी का शिक्षा दर्शन, श्री पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1986, पृष्ठ-80.
14. भावे, विनोबा: सर्वोदय और साम्यवाद, सर्वसेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी, 1954, पृष्ठ-14.
15. टिकेकर, इन्दु: सर्वोदय दर्शन तथा समाज परिवर्तन: कल और आज, सर्वसेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी, 1997, पृष्ठ-22.
16. दत्त, धीरेन्द्र मोहन: महात्मा गांधी का दर्शन, बिहार हिंदी ग्रन्थ अकादमी, पटना, 1981, पृष्ठ-29.
17. एडवार्ड, डम्बोल्ड: द पॉलिटिकल राइटिंग्स ऑफ थॉमस जैफर्सन, मैकमिलन कंपनी एण्ड फ्री प्रेस, न्यूयॉर्क, 1955, पृष्ठ-3.

•